P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-4* ISSUE-10* June- 2017
E: ISSN NO.: 2349-980X Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika

# हिन्दी सिनेमा में महिलाएँ : एक नारीवादी दृष्टिकोण

**सुचित कुमार यादव**
शोध छात्र,
राजनीतिक शास्त्र विभाग,
दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली

**सारांश**

क्या सिनेमा एक किताब (Text) की तरह हो सकता है? क्या सिनेमा को अध्ययन के स्रोत के रुप में देखा और व्याख्यायित किया जा सकता है?

प्रस्तुत लेख में ''डिस्कोर्स एनालिसिस'' प्रद्धति का प्रयोग करते हुए हिन्दी सिनेमा जगत का नारीवादी दृष्टिकोण से अध्ययन किया जायेगा तथायह समझने का प्रयास भी किया जायेगा कि महिलाओं को इन सिनेमाओं में किस तरह प्रदर्शित किया जाता रहा है। यद्यपि शुरुआती दौर से ही महिलाओं को दोयम दर्जे तथा एक वस्तु के रूप में प्रदर्शित करने का चलन रहा है। यह देखना रोचक होगा कि क्या इस प्रदर्शन के तरीके में कुछ महत्वपूर्ण बदलाव आया है? क्या ऐसी भी फिल्में हैं जहाँ महिलाओं को मुख्य भूमिकों में दिखाया गया है? क्या दलित महिलाओं और सामान्य महिलाओं (सवर्ण) के प्रस्तुतीकरण में कोई भेदभाव है?

**मुख्य शब्द :** हॉलीवुड, नारीवादी, 'डिस्कोर्स एनालिसिस', दलित ।

**प्रस्तावना**

ए.के. रामानुजन अपने एक लेख में सवाल उठाते है कि क्या किसी भी विषय पर देखने या समझने का भारतीय नजरिया है? (Is there an Indian way of thinking) इसके उत्तर में रामानुजम लिखते हैं कि निश्चित ही एक ऐसा समय था लेकिन आधुनिकता और वैश्वीकरण ने इसे बड़े पैमाने पर नष्ट किया है। (रामानुजन, 1990, पृ. 41)

इसी तरह यह सवाल खड़ा कर सकते हैं कि क्या फिल्म निर्माण का कोई विशिष्ट भारतीय नजरिया है? ऐसे सवाल के जवाब में कहा जा सकता है कि पूर्व के दशक में धार्मिक, सांस्कृतिक परंपरा व कर्मकांड भारतीय सिनेमा पर हावी रहे हैं। लेकिन वर्तमान फिल्मों में ऐसी मान्यतायें अनुपयुक्त होती जा रही हैं। विशेषकर नब्बे के दशक के उदारीकृत बाजार और उपभोक्तावादी संस्कृति के विस्तार में टेलीविजन तथा डिजिटल तकनीकी के साथ मिलकर विश्व स्तर पर देखे जाने वाली उच्च बजट के फिल्म निर्माण को बढ़ावा दिया है। वर्तमान में मुम्बई केन्द्रित बॉलीवुड उद्योग का विस्तार बढ़ता ही जा रहा है।

ऐसे में यह देखना महत्वपूर्ण होगा कि भारतीय सिनेमा जगत की विषय–वस्तु क्या रही है? किन–किन विषयों पर केन्द्रित फिल्मांकन करने का प्रचलन रहा है? और समय के साथ महिलाओं की भूमिका में क्या परिवर्तन आया है?

सामान्य रूप से सिनेमा में यथार्थ, रोमांस, गरीबी, राष्ट्रवाद व इतिहास जैसे विषयों को चुना जाता रहा है। 1950 से 1970 के दशकों के बीच हमारे समाज की ही तरह फिल्मों में भी पुरातन परंपराओं जैसे – सामंतवाद, जातिवाद तथा पुरुषत्व का बोलबाला देखा जा सकता है। इस दौर की फिल्मों में इन परंपराओं का शिकार होती महिलाओं को दिखाया गया है। 1980 के दशक की फिल्मों में एक्शन और ग्लैमर की भरपूर झलक देखी जा सकती है। अभिनेत्री के अभिनय कला को कम और उसकी शारीरिक खूबसूरती को अधिक प्रदर्शित किया गया है। यद्यपि नब्बे के दशक की फिल्मों में महिलायें पूरक की भूमिका में हैं। मुख्य भूमिका में पुरुष ही देखा जाता है लेकिन नब्बे के बाद उत्तर उदारवादी दौर में पुनः महिलाओं को घरों तक सीमित किया गया। वर्तमान में कुछ नये प्रचलन के तहत महिलाओं को केन्द्र में रखकर फिल्में बनायी जा रही हैं जहाँ नारित्व गुणों, क्षमता व अधिकारों का प्रदर्शन किया जा रहा है जो बेहद सकारात्मक है।

**साहित्य समीक्षा**

सिनेमा एक मनोवैज्ञानिक किताब है। (Nandy: 2013) यह एक विशेष वर्ग के मनोविज्ञान व मनोभाव का प्रदर्शन करती है। समाज का एक बड़ा हिस्सा सिनेमा से प्रभावित होता है। सिनेमा मत निर्माण करती है तथा कुछ हद तक जीवन दर्शन का हिस्सा बन जाती है। सिनेमा तत्कालिक समय में चल रही सामाजिक–राजनीति घटनाक्रम का प्रदर्शन करती है। उदाहरण के लिए नन्दी सिनेमा में आधुनिकता पर परम्परा के बहस को देखते हैं। जहाँ कुछ परम्परायें आधुनिकता का हिस्सा बनती दिख रही है तो कुछ आधुनिक मान्यताएँ परम्पराओं में समा जाती है।

सिनेमा जगत में पुरुष वर्ग का प्रभुत्व देखा जा सकता है। (Laura Malvey: 1975), पुरुष नायक फिल्म में चालक की भूमिका अर्थात् मुख्य भूमिका में होता है। फिल्म कहानी उसी के इर्द–गिर्द घूमती है। महिला नायिका द्वितीयक भूमिका में होती है। यह एक ऐसी भूमिका में होती है जो नायक को खुश रखे, जिससे नायक की सफलता व प्रसिद्धि बढ़ती रहे। रसेल अन्तर्राष्ट्रीय फिल्म जगत के इतिहास में महिला वैश्यावृत्ति के प्रचलन का तुलनात्मक अध्ययन करती है। हिन्दी सिनेमा में भी वैश्यावृत्ति के फिल्माकंन का प्रचलन रहा है। कमाल अमरोही की फिल्म *पाकीजा* एक अच्छा उदाहरण है। वैश्यावृत्ति पर दो प्रतिद्वन्द्वी राजनीतिक तर्क/पक्ष दिया जाता है। परम्परागत समाजवादियों का मानना है कि वैश्यावृत्ति खत्म होनी चाहिए क्योंकि यह मानव गरिमा का उल्लंघन है। वही दूसरी तरफ अराजकतावादी दृष्टिकोण बुर्जुवा वर्ग हित में सेक्स उद्योग का बनाये रखना चाहता है।

हिन्दी सिनेमा का नारीवादी *समीक्षा* सिनेमा में महिलाओं के अल्प–प्रस्तुतीकरण तथा गलत ढंग से प्रस्तुतिकरण पर सवाल करती है। सिनेमा में महिलाओं के वस्तुकरण व बहिष्करण की आलोचना करती है इसके विपरीत जैकलिन लेविन (Jacqueline Levitin & Other; Women Filmmakers Refocusin : 2003) जैसे लेखक नारीवादियों व अन्य लेखकों की तरह सिनेमा जगत में महिलाओं के शोषण व पुरुषसत्ता के प्रभुत्व की आलोचना नहीं करती बल्कि, फिल्म जगत में महिलाओं के सफलता को प्रस्तुत करती है। उन छोटे–छोटे टीवी सीरियल, धारावाहिक व फिल्मों को मुख पटल पर सामने लाती है जिसमें महिला चरित्रों द्वारा प्रभावशाली अभिनय किया गया है लेकिन लैंगिक पक्षपातीय प्रकृति के कारण इन्हें बड़े पर्दे पर नहीं लाया जा सका था।

नृजातीयता, राष्ट्रीय व भाषाई सिनेमा को पार कर चुकी फिल्म जगत में क्या महिला समूह का प्रतिनिधित्व सकारात्मक है? तकनीकी रूपी हथियार उत्पादन और वितरण तक महिलाओं की पहुँच को कितना सफल बनाया है, ये कुछ प्रमुख प्रश्न है।

जुलिया नीट (Julia Knight), [Knight Julia, Women and Mew German) जर्मनी में फिल्म निर्माण उद्योग में संस्थागत लैंगिक पक्षपात को उजागर करती है।

गौरतलब है कि 1970 तक जर्मनी में कोई भी महिला फिल्म निर्देशक नहीं थी क्योंकि वहाँ निर्देशक को सरकारी धन आवंटित किया जाता है। इस संरचना ने महिला निर्देशकों को बहिष्कृत कर दिया। आगे चलकर महिला आंदोलनों के परिणामस्वरूप संस्थागत संरचना में परिवर्तन हुआ और अब बड़े पैमाने पर महिलाएँ फिल्म निर्देशन की भूमिका में है।

**धारणा एवं परिक्लपना**

सिनेमा मनोरंजन के लिए बनाया और देखा जाता है। दर्शकों को एक ऐसी आभासी दुनिया से परिचित कराया जाता है, जो वास्तविक दुनिया से भिन्न है। सिनेमा आम जनमानस में मत निर्माण (Opinions) के साथ–साथ, एक चित्र की रचना करती है। यह प्रभावशाली संस्कृति मूल्य को पुर्नस्थापित करती है। इसी क्रम में सिनेमा में पुरुषसत्तात्मक मूल्य को देखा जा सकता है। 1950–70 के दौरान की फिल्मों में महिलाएँ जहाँ परम्परा व नैतिकता के नाम पर पुरुषसत्ता की शिकार होती दिखती है, वहीं 1990 के दशक में पूँजीवादी व उपभोक्तावादी संरचना ने महिला शोषण व भेदभाव के अनेक नये हथकण्डे अपनाये है। यद्यपि नारीवादी आन्दोलनों ने महिला समानता व अधिकार के हेतु आद्य सामाजिक पटल पर एक बहस अवश्य छेड़ा है, जिसका असर वर्तमान की कुछ फिल्मों में भी देखा जा सकता है। परन्तु, यह रोचक होगा कि ये प्रयास पुरुषसत्तात्मक मनोदशा को कितना हद तक बदल पाने में सक्षम होता है।

**पद्धति**

यहाँ 'डिस्कोर्स एनालिसिस' (भाषण–विश्लेषण) पद्धति का प्रयोग किया गया है। डिस्कोर्स एनालिसिस ऐसी प्रक्रियाओं की तरफ इंगित करता है, जिसके द्वारा भाषण अथवा अन्य कम्युनिकेटिव टेक्स्ट (Communicative Text) जैसे – फिल्म इत्यादि का परीक्षण किया जाता है अथवा उसके निहित अर्थ को व्याख्यायित करने से जुड़ा होता है।

यह लेखन, कथा, पटकथा तथा अन्य फिल्मी दृश्यों को व्याख्यायित करने की एक पद्धति है। फिल्म लोकप्रिय संस्कृति का हिस्सा माना जाता है। लोकप्रिय संस्कृति, सामूहिक संस्कृति/जनसंस्कृति (Mass Culture) का समानार्थी होता है, जहाँ समाज का एक बड़ा तबका जाति धर्म के वर्गीय सीमा से परे जाकर एक सामूहिक अनुभव साझा करता है।

**हिन्दी सिनेमा की विषय–वस्तु**

भारतीय सिनेमा यथार्थ, रोमांस, भावबोध (emotions) व कल्पनाशीलता को प्रदर्शित करता है। गोविन्दा, अक्षय कुमार व सलमान खान जैसे अभिनेता के रूप में तथा निर्देशक के रूप में डेविड धवन कई कॉमेडी (हास्य) फिल्मों का फिल्मांकन किये हैं। *हेरा–फेरी, हंगामा, अन्दाज अपना–अपना, गरम–मसाला* इत्यादि महत्वपूर्ण कॉमेडी फिल्में हैं।

राष्ट्रवादी व्यक्तित्व पर आधारित फिल्मों का निर्माण बॉलीवुड का एक प्रमुख हिस्सा रहा है। प्रारंभ से ही पौराणिक, धार्मिक मुद्दों के साथ–साथ राष्ट्रवादी नजरिये से भी फिल्में बनायी जाती रही हैं। शिवाजी,

P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-4* ISSUE-10* June- 2017
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

झांसी की रानी लक्ष्मी बाई अथवा 1857 के विद्रोह पर केन्द्रित कई फिल्मों का फिल्मांकन किया गया। ओम प्रकाश मेहरा के निर्देशन में बनी फिल्म *रंग दे बसंती,* गांधी के जीवन पर बनी रिचर्ड एडबरों की फिल्म *गांधी*। राजकुमार हिरानी ने गांधी के सिद्धान्त व वर्तमान रोमांस को साथ लाकर एक फिल्म बनायी *लगे रहो मुन्नाभाई* (2006) जो रोमांटिक अंदाज में पेश की गई। इस फिल्म का टैगलाइन था – 'क्या होगा' वर्तमान–भूतकाल से मिलेगा? क्या होगा जब एक इतिहास का प्रोफेसर किसी ऐतिहासिक व्यक्तित्व से टकरायेगा। एक प्रमुख प्रचलन के तहत वॉलीवुड ने ऐतिहासिक विषयों पर पुनः जाकर (Revisit) उसे नये तरह से व्याख्यायित करने की कोशिश किया है। *मुगले आजम,* संतोष सिवन द्वारा फिल्मांकित *अशोका, गदर एक प्रेम कथा*[1] (2001), *लगान* जिसमें क्रिकेट मैच की कहानी के जरिये औपनिवेशिक इतिहास को दोहराया गया है। इसी प्रकार *परिणिता, जोधा अकबर*।[2] ऐसा ही प्रचलन हॉलीवुड में भी रहा है। जॉन लौंडाउ द्वारा निर्देशित फिल्म *टाइटैनिक* तथा रेडली स्कोट के निर्देशन में बनायी गयी फिल्म *ग्लाडिटोर*।

1990 के बाद फिल्म जगत के विषयवस्तु में बड़ा बदलाव आया है। निर्देशक तात्कालिक मुद्दों पर आधारित फिल्मों का फिल्मांकन करते हैं। जेसे 1993 में मुम्बई दंगे, 2001 में संसद हमले,[3] कश्मीर के धार्मिक हिंसा, आतंकवाद, भारतीय राज्य पर आये संकट विषय पर फिल्में बनायी गयी।

करण जौहर, आदित्य चोपड़ा जैसे निर्देशकों ने आर्थिक विकास से वंचित रह गए उस निचले तबके पर केन्द्रित फिल्में बनायी हैं। जो आज अशिक्षा, बेरोजगारी और भुखमरी से जूझ रहे हैं।

## हिन्दी सिनेमा में महिलाएँ

सिनेमा में महिलाओं की भूमिका समय के साथ–साथ बदलती रही है। भूमिका में बदलाव महिलाओं के प्रति बदलते नजरिये को प्रतिबिम्बित करता है। 1950–70 के दौर में ग्रामीण भारत में गरीबी के साथ सामाजिक परम्परायें अति समृद्ध और प्रभावशाली थी। ऐसे में इस दौर की फिल्में ग्रामीण गरीबी के साथ–साथ पुरातन परम्पराओं को भी फिल्मांकित करती है। इस दौरान की अनेकों ऐसी फिल्में हैं जो सामन्ती प्रथा, बाल विवाह, पुरुषसत्ता, विधवा प्रथा, जाति प्रथा जैसी पुरातन मान्यताओं की शिकार होती महिलाओं को चित्रण करती है। उदाहरण के लिए *कागज के फूल, मदर इण्डिया, पाकीजा* और *पड़ोसन* इत्यादि फिल्में।

गुरुदत्त के द्वारा निर्देशित 'कागज के फूल' (1959), पारिवारिक कलह के अनोखे आयाम का चित्रण करती है जहाँ महिलाओं को ही दुःखद मार झेलना पड़ती है। फिल्म में सुरेश सिन्हा (गुरुदत्त) की शादी वीना (Veena) से होती है। सुरेश सिन्हा जो कि एक फिल्म निर्देशक की भूमिका में होते हैं। वीना से अलग हो जाते हैं और उनकी बेटी (पम्मी) एक निजी स्कूल में पढ़ती है। एक बार सिन्हा बरसात की रात में अपने कोट एक लड़की शान्ती (वहीदा रहमान) को देते हैं और शान्ति जब उसे लौटाने स्टूडियो आती हैं तो सिन्हा अपनी फिल्म देवदास में उसे पारों की भूमिका निभाने के लिए तैयार करते हैं।

आगे चलकर सिन्हा और शान्ती आपस में शादी कर लेते हैं। पम्मी इससे काफी खुश होती है और अपने पापा के साथ रहना चाहती है लेकिन अदालत से वीना मुकदमा जीत जाती है और पम्मी को अपने पास ले जाती है। सिन्हा और शान्ती के नीच टकराव हो जाता है। यद्यपि शांति फिल्म स्टूडियो को बेहतर ढंग से सम्भाल लेती है लेकिन सिन्हा अहं (ego) के कारण शान्ती के पास नहीं जाते हैं और अकेले दम तोड़ देते हैं।

1972 में कमल अमरोही द्वारा निर्देशित फिल्म *पाकीजा* (पवित्र), नरगिस (मीना कुमारी) के बारे में है जो कोठे पर पलती है वो इस दुश्चक्र को तोड़ पाने मे असमर्थ रहती है, एक लोकप्रिय नर्तकी/गायिका साहिबजान के रूप में विख्यात होती है। नवाब सलीम अहमदखान (राजकुमार) साहिबजान की सुन्दरता व मासूमियत पर मर मिटता है और उसे अपने साथ चलने के लिए राजी कर लेता है। लेकिन, वो जहाँ भी जाते हैं लोग साहिबजान को पहचान लेते हैं। तब सलीम उसका नाम पाकीजा रख देता है और कानूनी तौर पर निकाह करने के लिए मौलवी के पास जाता है। सलीम को बदनामी न हो यह सोचकर साहिबजान शादी से मना कर देती है और कोठे पर लौट आती है। 'इन्हीं लोगों ने ले लीन्हा दुपट्टा मेरा' एक प्रभावशाली गीत रहा है। फिल्म परम्परागत दुश्चक्र में फंसी महिला को दर्शाती है।

*मदर इण्डिया* फिल्म की शुरूआत वर्तमान काल में गाँव के लिए एक पानी के नहर के पूरा होने से होती है। राजा (नर्गिस), गांव की मां के रूप में, नहर का उद्घाटन करती है और अपने भूतकाल पर नजर डालती है, जब वह एक नई दुल्हन थी। राधा और शामू (राजकुमार) की शादी का खर्च राधा की सास ने सुखी लाला से उधार लेकर उठाया था। इस कारण गरीबी और मेहनत के कभी न खत्म होने वाले चक्रव्यूह में राधा फँस जाती है। उधार की शर्तें विवादास्पद होती है, परन्तु गांव के संरपंच खुशी लाला के हित में फैसला सुनाते हैं। कुछ दिन बाद शामू और उसकी मां की मृत्यु हो जाती है। सुखीलाल राधा से शादी का प्रस्ताव रखता है जिसे वह नकार देती है।

राधा का बेटा बिरजू बड़ा होकर सुखीलाल और उसकी बेटी पर हमला कर देता है। अतः उसे गाँव से निकाल दिया जाता है और वह एक डाकू बन जाता है। सुखीलाल की बेटी की शादी के दिन वह बदला लेने वापस आता है। राधा, जिसने ये वादा किया था कि बिरजू किसी को कोई हानि नहीं पहुँचाएगा। बिरजू को गोली मार देती है जो उसकी बाँहों में दम तोड़ देता है यद्यपि फिल्म में नारी–शक्ति का सकारात्मक रूप में दिखाया गया। राधा एक ऐसी साहसिक महिला है जो एक तरफ कठोर संघर्ष करके बच्चों का पालन–पोषण करती है, वहीं दूसरी तरफ गाँव के लोगों के हित में अपने ही बेटे को गोली मार देती है। पूरी फिल्म अन्यायपूर्ण सामन्ती संरचना को बारीकी से दर्शाती है।

ऐसी ही फिल्म *सुजाता* में निर्देशक विमल राय

(1959) महिला के जातिगत शोषण व भेदभाव को दिखाते है एक संभ्रात ब्राह्मण दम्पत्ति उपेन्द्र चौधरी (तरूण बोस) तथा चारू (सुलोचना) एक दलित बच्ची सुजाता (नूतन) को अपने घर में पालते है। उपेन्द्र दम्पत्ति की एक बेटी रमा होती हे। चूँकि सुजाता का पिता अछूत जाति से था, इसलिए जब उपेन्द्र की बुआ (ललिता पवार) उनके घर आती है तो सुजाता को छुपाने की कोशिश किये जाने के बावजूद बुआ को पता चल जाता है और उपेन्द्र दम्पत्ति को वह निर्देश देती है कि उसे किसी भी तरह से उसी की जाति–बिरादरी में भेज दिया जाये। लेकिन सारे प्रयास विफल हो जाते है। सुजाता उपेन्द्र के परिवार में ही बड़ी होती है और उपेन्द्र दम्पत्ति को वह अपना माँ–बाप समझने लगती है। बुआ का नवासा अधीर (सुनीलदत्त) जब शहर से पढ़ाई कर वापस आता है तो उसे सुजाता को देखते ही प्यार हो जाता है, जबकि बुआ चाहती है कि अधीर और रमा का विवाह हो। सुजाता भी अधीर को चाहने लगती है। एक दिन जब चारू और बुआ के बीच चल रही बातचीत को जब सुजाता सुनती है तो उसे पता चलता है कि वह अछूत है। वह अधीर से किनारा करने की कोशिश करती है लेकिन इन दकियानूसी बातों व जातिवादी भेदभाव को अधीर नहीं मानता है।

एक दिन एक हादसे में चारु को चोट लग जाती है और चारु को सुजाता का खुन चढ़ता है। इससे पहले चारु बुआ के बहकावे में आकर सुजाता को अधीर प्रेम करने के लिए दुलारती है, लेकिन अब चारु सुजाता को अपना लेती है और आखिरकार बुआ भी इस रिश्ते को अपनी मंजूरी दे देती है। फिल्म जातिगत अपमान, और उससे उत्पन्न मनोवैज्ञानिक इनफिरियरिटी को दिखाता है।

1980 के दशक में एक्शन, कैमरा शूटिंग, तथा कलाकारिता व तकनीक के विभिन्न प्रचलन से हॉलीवुड में बड़े स्तर पर बदलाव का वाहक बना। साथ ही अब अभिनेत्रियों के अभिनय का अवसर सिकुड़ता गया परिणमतः वो कमजोर हुई। अब महिलाएँ फिल्मों में ग्लैमर दिखाने, पेड़ों के इर्द–गिर्द नाचने, अपहरण, रेप, बलात्कार व हत्या कर दिये जाने, जैसी भूमिका तक सिमट गयी। इस दौरान महिलाओं की बदन का महत्व बढ़ गया। ऐसे में अभिनय नहीं बल्कि उसकी शारीरिक व भौतिक सुन्दरता सफलता की कुंजी बन गयी। उदाहरण के लिए 1980 में ख्याति प्राप्त महिला श्रीदेवी "Thunder Things" (बिजली जैसी/आकर्षक) नाम से जानी जाती थी जो अन्य महिला स्टार की तरह सौन्दर्य के लिए घंटों समय लगाती थी। *हिम्मतवाला* व *जोशिला* श्रीदेवी की दो महत्वपूर्ण फिल्में हैं।

नब्बे के दशक[4] मे महिलाओं की भूमिका में बड़ा बदलाव आता है। अब अभिनेत्री केवल सहायक की भूमिका में आ गई। उदाहरण राजीव राय द्वारा निर्देशित फिल्म *मोहरा* में देखा जा सकता है। फिल्म की शुरुआत होती है विशाल के (सुनील शेट्टी) जेल जाने से जहाँ रोमा (रविना टंडन) के पिता जेल ऑफिसर होते है। रोमा पत्रकार के तौर पर जेल की रिर्पोटिंग करती हैं। रोमा पाती है कि विशाल एक व्यक्ति के हत्या के जुर्म में जेल में हैं जो उसकी पत्नी के बहन के रेप करने की कोशिश कर रहा था लेकिन वो खुद आत्महत्या कर ली। रोमा जिंदल (नसरुद्दीन शाह) की मदद से विशाल को छुड़ा लेती है।

जिंदल, रोमा का अपहरण कर लेता है और विशाल को अपने अपराध की दुनिया में शामिल करने की कोशिश करता है। पूरे फिल्म में रोमा की सफलता उसके शक्तिशाली बॉस जिंदल पर निर्भर करती है।

उत्तर–उदारवादी दौर की फिल्में महिलाओं का पुनः घर में कैद करती है और पुरुषों को बाहर की जिम्मेदारी सौंपती है। जैसे *कभी खुशी कभी गम* (2001 संजय लीला भंसाली), *कुछ–कुछ होता है* (1998 करण जौहर), *दिल तो पागल है* (यश चौपड़ा 1997), *बीवी नम्बर–1* (1999 डेविड धवन) इत्यादि फिल्मों में महिलाओं को सजावट व घरेलू कामकाज करने वाली महिला के रूप में पेश किया गया है।

**बॉलीवुड सिनेमा में नया प्रचलन**

हाल फिलहाल में बॉलीवुड में कुछ एक नया प्रचलन शुरू हुआ है, जो महिलाओं को मुख्य भूमिका में रखता है। उदाहरण के लिए *हाइवे, पिंक, ए दिल है मुश्किल, आक्रोश, मैरीकाम, दंगल,* जैसे अनेक फिल्मों को देखा जा सकता है।

इम्तियाज अली द्वारा निर्देशित *हाइवे* फिल्म (2014) की कहानी वीरा त्रिपाठी (आल्याभट्ट) के विवाह के पूर्व संध्या से आरम्भ होती है वह एक धनी व्यापारी की पुत्री है। वह रात को अपने भावी मंगेतर के साथ राष्ट्रीय राजमार्ग पर थी (हाइवे) तभी उसका अपहरण हो जाता है, क्योंकि वीरा के पिता का सरकार के साथ अच्छे सम्बन्ध हैं, इसलिए अपहरणकर्ता महावीर भाटी (रणदीप हुड्डा) अपने कई काम उसके माध्यम से करवाना चाहते हैं और लम्बे समय तक उसे लेकर भागता–फिरता है, जैसे–जैसे समय गुजरता है, वीरा को इस सम्बन्ध में अच्छा महसूस होता है। वीरा महावीर के सामने स्वीकार करती है कि उसे यात्रा करना अच्छा लगता है, और वह अपने पूर्व जीवन में नहीं जाना चाहती है। लेकिन कुछ दिनों के बाद महावीर उसे छोड़ देने का निर्णय करता है। वीरा उसके प्रस्ताव को अस्वीकार कर महावीर के साथ रहने का निर्णय लेती है। पुलिस महावीर की हत्या कर देती है और वीरा को उसके माता–पिता के पास भेज दिया जाता है, इस घटना से परेशान वीरा अपने परिवार और चाचा के साथ अधिक समय तक न रहने की इच्छा जताती है। अन्त में वीरा पहाड़ी इलाकों मे महावीर के साथ बिताये अपने एक–एक दिन को याद करती है, इस तरह यह फिल्म पूरी तरह आलिया भट्ट के मुख्य भूमिका के इर्द–गिर्द घूमती है।

अनिरूद्ध चौधरी के निर्देशन में बनी फिल्म *पिंक* (2016) भी महिला प्रधान है। तीन लड़कियां मीनल अरोड़ा (तापसी पन्नों), फलक अली (कीर्ति बुल्हरी), एनरिया (एनरिया तारियांक) दिल्ली में एक साथ रहकर नौकरी करती हैं, एक दिन तीनों किसी एक शो में जाती हैं जहाँ उनकी मुलाकात राजवीर (अंगद बेदी) और उसके दोस्तों से होती है व उन्हें किसी रिसार्ट में खाने का निमंत्रण देते हैं। वहाँ पर राजवीर मिनल के साथ उसके बार–बार मना करने पर भी सेक्स करने हेतु दबाव डालता है। अतः मिनल उसके सिर पर बोतल मार देती है, और तीनों

लड़कियाँ वहाँ से भाग जाती हैं। राजबीर के परिवार की राजनीति में गहरी दखल है, वो उनसे बदला लेने के लिए पुलिस में शिकायत दर्ज कराता है कि मिनल और उसकी दोस्त वेश्या है, और उन्होंने उस पर जानलेवा हमला किया। दीपक सहगल (अमिताभ बच्चन) लड़कियों की तरफ से मुकदमा लड़ने को तैयार होते है, अदालत में राजवीर का वकील प्रशान्त मेहरा (पीयूश मिश्रा) तीनों लड़कियों को वेश्या साबित करने की कोशिश करता है, और कहता है कि उन्होंने राजबीर से पैसे माँगे थे, वहीं दीपक सहगल सहमति को मुद्दा बनाता है, तर्क की एक श्रृंखला चलती रहती है।

आखिर में दीपक कहता है कि मीनल ने 'नहीं' कहा था, जो कोई शब्द ही नहीं है, यह अपने आपमें एक वाक्य है, जिसे स्पष्टीकरण की आवश्यकता नहीं है, अन्त में अदालत लड़कियों के पक्ष में फैसला सुनाती है।

नीतिश तिवारी के निर्देशन में बनाई गयी फिल्म *दंगल* (2016) महावीर फोगाट नामक एक पहलवान अपनी दो बेटियों गीता और बबिता को पहलवानी के खेल के लिए तैयार करता है, गीता बबीता कई छोटे–बड़े प्रतियोगिता के साथ–साथ एक बार कॉमनवेल्थ खेल में हिस्सा लेती है और स्वर्ण पदक हासिल करती है।

**निष्कर्ष और सुझाव**

उपुर्यक्त व्याख्या से इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि जहाँ 1950–60 के दशकों के फिल्मों में महिलाओं पर लगे सामाजिक व धार्मिक मूल्यों व नैतिकता के बन्धनों और उसके दुष्परिणाम को दिखाया गया है, वहीं अस्सी के दशक में आने वाली फिल्मों में महिलाओं के बदन की सुन्दरता को अधिक महत्व दिया गया है, नब्बे के दशक की फिल्मों में महिलाओं को पुरुष अभिनेता के पूरक मात्र के रूप में दिखाया गया है। मुख्य भूमिका से हटाकर इन्हें यौन–हिंसा व अपहरण की पीड़िता अथवा घरेलू कामकाजी महिला के रूप में दिखाया गया है। हाल के दिनों में कुछ महत्वपूर्ण ऐसी फिल्में बनी हैं, जो पूरी तरह स्त्री नायिका केन्द्रित रही हैं, इस दौर में नये गीतों का भी प्रचलन शुरू हुआ है, पुराने गीत,

'किसी राह में किसी मोड़ पर
यूं ही चल न देना तू छोड़ के'

जैसे आग्रह करने वाली नायिका आज यह कहते हुए देखी जाती है कि –

'मेरे सईंया जी से आज
मैंने ब्रेक–अप कर लिया।'

निश्चित ही यह बदलाव सकारात्मकता का सन्देश है।

**संदर्भ ग्रंथ सूची**

1. *Dangal film(2016)directed by Nitesh Tiwari*
2. *Gupta, Chidananda Das(1980) New Directions in Indian Cinema,Published by University of California Press*
3. *Jain, J., & Rai, S. (2009). Films and Feminism: Essays in Indian Cinema. (pp.1o) Jaipur, Rawat Publications Julia Knight, Women and the New German Cinema, Verso 1992*
4. *Julia Knight, Women and the New German Cinema, Verso 1992*
5. *Khilnani,Sunil,A new cultural lexicon, article in The Hindu news paper, sunday,sep 01,2000*
6. *kazami, fareed (2010) Sex in Cinema: A History of Female Sexuality in Indian Films,rupa publication ,new Delhi*
7. *Lutgendorf, Philip; Is There an Indian Way of Filmmaking, International Journal of Hindu Studies, Vol. 10, No. 3 (Dec., 2006), Mother India film(1957) directed by Mehboob Khan*
8. *Vasudevan, Ravi S.Making Meaning of Indian Cinema, Oxford University Press, 2000.*
9. *Mulvey, Laura. "Visual Pleasure and Narrative Cinema." Film Theory and Criticism : Introductory Readings. Eds. Leo Braudy and Marshall Cohen. New York: Oxford UP,1999: 833-44*
10. *Nandy, Ashish (May 2013) Indian Popular Cinema as a Slum's Eye Viewof Politics, Interview with Jessica Saxon*
11. *Russell Campbell, Marked Women: Prostitutes and Prostitution in the Cinema University of Wisconsin Press 2005*
12. *Rebecca Hillauer, Encyclopedia of Arab Women Filmmakers, American University in Cairo Press, 2005, ISBN 977-424-943-7*
13. *Sujata film,(1959) directed by Bimal Roy*
14. *Women Filmmakers: Refocusing, edited by Jacqueline Levitin, Judith Plessis and Valerie Raoul, Paperback Edition, Routledge 2003*
15. *Wazir, Burhan, Misogyny in Bollywood, The World Today, Vol. 69, No. 1 (February & March 2013), pp. 42-43, Published by: Royal Institute of International Affairs.*

**पाद टिप्पणी**

1. *भारत पाक विभाजन पर आधारित यह फिल्म एक सिक्ख जवान सैनिक की कहानी है जो पाक सेना से लड़ता है।*
2. *आशेतोष गोवारिकर द्वारा निर्देशित यह फिल्म सामन्ती रोमांस पर आधारित है।*
3. *13 दिसम्बर 2001 को भारतीय संसद पर आतंकवादी हमला हुआ था। नब्बे के दशक में उदारीकरण के बाद जीवन स्तर में तेजी से बदलाव हुआ। ऐसे में दर्शकों की संख्या में भी बढ़ोतरी हुई।*